स्वयं से रूबरू होने का लक्ष्य बनाएं ?

जीवन में व्यक्ति और समाज दोनांे अपना विशेष अर्थ रखते हैं। व्यक्ति समाज से जुड़कर जीता है, इसलिए समाज की आंखों से वह अपने आप को देखता है। साथ ही उसमें यह विवेक बोध भी जागृत रहता है 'मैं जो भी हूं, जैसा हूं' इसका मैं स्वयं जिम्मेदार हूं। उसके अच्छे बुड़े चरित्र का बिम्ब समाज के दर्पण में तो प्रतिबिम्बित होता ही है, उसका स्वयं का जीवन भी इसकी प्रस्तुति करता है। और हम सब सोचते हैं कि यदि अवसर मिलता तो एक बढ़िया काम करते। कलाकार अपनी श्रेष्ठ कृति के सृजन के लिए अबाधित एकांत खोजता है। कवि निर्जन वन में अपने शब्द पिरोता है। योगी शांत परिवेश में स्वयं को टटोलता है। छात्र परीक्षा की तैयारी के लिए रातों को जागता है, क्योंकि उस समय शांति होती है और उसे कोई परेशान या बाधित नहीं करता। दफ्तर और कुटुम्ब की गहन समस्याओं पर विचार करने के लिए एवं व्यापार व्यवसाय की लाभ-हानि के द्वंद्व से उपरत होने के लिए हम थोड़ी देर अकेले में जा बैठते हैं।

योगी और ध्यानी कहते हैं कि आंखें बंद करो और चुपचाप बैठ जाओ मन में किसी तरह के विचार को न आने दो समस्याओं से जूझने का यह एक तरीका है। पर गीता का ज्ञान वहां दिया गया जहां दोनों ओर युद्ध के लिए आकुल/व्यग्र सेनाएं खड़ी थी। श्रीकृष्ण को ईश्वर का रूप मान लें तो सुननेवाले अर्जुन तो सामान्यजन ही थे। आज भी खिलाड़ी दर्शकों के शोर के बीच अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन कर दिखाते हैं। अर्जुन ने भरी सभा में मछली की आंख को भेदा था। असल में सृजन और एकाग्रता के लिए, जगत के नहीं मन के कोलाहल से दूर जाना होता है।

एक जिज्ञासु अपनी समस्याओं के समाधान के लिए खोजते-खोजते संत तुकाराम के पास पहुंचा उसने देखा तुकाराम एक दुकान में बैठे कारोबार में व्यस्त थे। वह दिन भर उनसे बात करने की प्रतीक्षा करता रहा और संत तुकाराम सामान तौल-तौल कर बेचते रहे। दिन ढला तो वह बोला 'मैं आप जैसे परम ज्ञानी संत की शरण में ज्ञान पाने आया था, समाधान पाने आया था, लेकिन आप तो सारा दिन केवल कारोबार करते रहें। आप कैसे ज्ञानी हैं ? प्रभु भजन या धूप दीप बाती करते नहीं देखा। मैं समझ नहीं पाया कि लोग आपको संत क्यों मानते हैं ?' इस पर संत तुकाराम बोले 'मेरे लिए मेरा काम ही पूजा है, ध्यान है, पूजा-अर्चना है, मैं कारोबार भी प्रभु की आज्ञा मान कर करता हूं।

जब-जब सामान तौलता हूं तराजू की डंडी संतुलन स्थिर होती है, तब-तब मैं अपने भीतर जागकर मन की परीक्षा लेता हूं कि तू जाग रहा है न ? तू समता में स्थित है या नहीं ? साथ-साथ हर बार ईश्वर का स्मरण करता हूं, मेरा हर पल, हर कर्म ईश्वर की आराधना है।'और जिज्ञासु ने कर्म और भक्ति का पाठ सीख लिया। कोई भी सृजन हो, सफलता हो, कर्म हो या शक्ति का अर्जन हो, महज प्रार्थना से नहीं आती, बल्कि हमारे व्यवहार, कार्य, एकाग्रता, निष्ठाशील व्यवहार से आती है। जीवन एक संघर्ष है। चुनौतियां तो आएंगी, उनसे सहम कर जो हिम्मत हार जाते हैं, सफलता उनसे दूर भाग जाती है। राबर्ट शुलर के शब्द याद रखें- 'वैन दी गोंग गैट्स टफ, गैट गोइंग।' जब समय विपरीत होता है तो मजबूत दिल के लोग और जोश से आगे बढ़ते हैं। मुश्किलें ही अंततः समाप्त होती हैं, साहसी व्यक्ति का साहस नहीं। हमेशा उमंग रहे, यथार्थपरक कल्पना की उड़ान भरें और जीवन में ऊंचे लक्ष्यों को मस्तिष्क

में संजोया जाए। किसी चमत्कार या भगवान के भरोसे कुछ हासिल कर लेने की कल्पना एक तरह का पलायन है।

आजकल भगवान की आराधना का रिश्ता केवल मतलब का होता है जब कभी कुछ चाहिए दौड़कर भगवान के आगे हाथ फैलाकर मांग लिया। मांगने से भगवान देनेवाला नहीं है। भगवान उन्हीं को देता है जो एकाग्रता और पवित्रता के साथ अपनी कर्म करते हैं। आध्यात्मिक सोच आसपास विश्वास की जोत जगाती है। विश्वास में सच में, प्यार में, व्यवस्था में, कर्म में, लक्ष्य में होता है, वहां आशा जीवन बन जाती है। जब कभी इंसान के भीतर द्वंद्व चलता है तो जिंदगी का खोखलापन उजागर होने लगता है। अक्सर आधे-अधूरे मन और निष्ठा से हम कोई भी कार्य करते हैं तो उसमें सफलता संदिग्ध हो जाती है फिर हम झटपट अदृश्य शक्ति से रिश्ता नाता गढ़ने लगते हैं।

अक्सर मौत से जूझ रहे व्यक्ति के लिए उसकी सलामती के लिए हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, जबकि हमारी प्रार्थना मौत से जूझ रहे व्यक्ति की सलामती के साथ डॉक्टरों के दिमाग और हाथों के संतुलन के लिए होनी चाहिए।

कह सकते हैं कि आध्यात्मिकता जिंदगी जीने का तरीका है खुद के साथ-साथ दूसरों से उचित व्यवहार करने का तरीका है, इसके जरिए हम खुद में झांक सकते हैं, हालात का बेहतर विश्लेषण कर सकते हैं और फिर, हर परेशानी का हल खुद के भीतर ही होता है। हालांकि अदृश्य शक्ति पर विश्वास से मुंह नहीं मोड़ सकते लेकिन शक्ति खुद के भीतर ही मौजूद है और जिस्म से ही निकलती है। भीतरी शक्ति को बाहर निकालकर नाममुकिन को भी मुमकिन किया जा सकता है।

आदमी का अच्छा या बुरा होना भाग्य, परस्थिति या कोई दूसरे व्यक्ति के हाथ में नहीं होता। ये सब कुछ घटित होता है हमारे स्वयं के शुभ-अशुभ भावों से, संकल्पों से। हम, आप, सभी जैसा सोचते हैं, जैसा चाहते हैं, वैसा ही बन जाते हैं। मैं क्या होना चाहता हूं, इसका जिम्मेदार मैं स्वयं हूं। मनुष्य जीवन में तभी ऊंचा उड़ता है जब उसे स्वयं पर भरोसा हो जाए कि मैं अनन्त शक्ति संपन्न हूं, ऊर्जा का केन्द्र हूं। अन्यथा जीवन में आधा दुख तो इसलिए उठाते फिरते हैं कि हम समझ ही नहीं पाते हैं कि सच में हम क्या हैं ? क्या हम वही है जो स्वयं को समझते हैं ? या हम वो जो लोग समझते हैं। जॉर्ज वाशिंगटन के अनुसार- "यदि आप स्वयं के सम्मान को महत्वपूर्ण समझते हैं तो गुणवान लोगों के साथ रहे। कुसंगति से बेहतर है कि आप अकेले रहे।"

अपने आप से जब तक रूबरू नहीं होते, लक्ष्य की तलाश और तैयारी दोनों अधूरी रह जाती है। स्वयं की शक्ति और ईश्वर की भक्ति भी नाकाम सिद्ध होती है और यही कारण है कि जीने की हर दिशा में हम औरों के मुहताज बनते हैं, औरों का हाथ थामते हैं, उनके पदचिन्ह खोजते हैं। कब तक हम औरों से मांगकर उधार के सपने जीते रहेंगे। कब तक औरों के साथ स्वयं को तौलते रहेंगे और कब तक बैशाखियों के सहारे मिलों की दूरी तय करते रहेंगे यह जानते हुए भी कि बैशाखियां सिर्फ सहारा दे सकती है, गति नहीं ? हम बदलना शुरू करें अपना चिंतन, विचार, व्यवहार, कर्म और भाव। हम जिन चीजों को प्यार करते हैं, उनसे ही तय होता है कि हम क्या हैं ? मुक्ति पाने के लिए इंसान के पास तीन चीजों का होना जरूरी है। उसे जानना चाहिए कि उसे किन चीजों में भरोसा करना है, उसे यह भी जानना जरूरी है कि

उसे किन चीजों की इच्छा करनी चाहिए और यह भी कि उसे क्या करना चाहिए। प्रेषक :

(ललित गर्ग)
ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25, आई0पी0 एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92
फोन : 22727486, 9811051133